SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

डॉ. शंकर शेषः एक नाटककार का रंगशिल्प

बेबी शीला राठौर, पीएच–डी (हिन्दी)
एम.पी. नगर, कोरबा, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
बेबी शीला राठौर, पीएच–डी
E-mail : rathorebabysheela@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 02/05/2026
Revised on : 03/07/2026
Accepted on : 12/07/2026
Overall Similarity : 00% on 04/07/2026

Plagiarism Checker X - Report
Originality Assessment
0%
Overall Similarity

Date: Jul 4, 2026 (03:35 PM)
Matches: 0 / 1555 words
Sources: 0

Remarks: No similarity found, your document looks healthy.

Verify Report: Scan this QR Code

शोध सार

हिन्दी नाट्य साहित्य के विकास में डॉ. शंकर शेष का विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अपने नाटकों के माध्यम से समकालीन भारतीय समाज की जटिल सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों का यथार्थपरक एवं संवेदनशील चित्रण किया है। उनके नाटकों में मानवीय मूल्यों का क्षरण, सामाजिक विषमताएँ, सत्ता–संघर्ष, नैतिक द्वंद्व, पारिवारिक विघटन तथा व्यक्ति की आंतरिक पीड़ा जैसे विविध जीवन–संबंधी प्रश्न अत्यंत प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुए हैं। उनके नाटक केवल साहित्यिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि मंचीय दृष्टि से भी अत्यंत सफल और प्रभावोत्पादक सिद्ध हुए हैं, जिसके कारण उनका देश के विभिन्न रंगमंचों पर अनेक बार सफल मंचन किया गया है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य डॉ. शंकर शेष के नाटकों के रंगशिल्प का समग्र एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। इस अध्ययन में उनके नाटकों की कथावस्तु, चरित्र–चित्रण, संवाद–योजना, दृश्य–विधान, मंच–सज्जा, प्रकाश–योजना, ध्वनि–संयोजन, प्रतीकात्मकता तथा रंग–प्रयोगों का आलोचनात्मक विवेचन किया गया है। उनके रंगशिल्प की प्रमुख विशेषता उसकी सहजता, स्वाभाविकता, संप्रेषणीयता तथा मंचीय प्रभावशीलता है। उन्होंने जटिल रंग–उपकरणों की अपेक्षा सशक्त अभिनय, सजीव संवाद, सघन नाटकीय परिस्थितियों तथा प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से दर्शकों पर गहरा प्रभाव उत्पन्न किया है। डॉ. शंकर शेष ने रंगमंच को मात्र मनोरंजन का साधन न मानकर सामाजिक चेतना, मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना तथा जन–जागरण का प्रभावी माध्यम बनाया। उनके नाटकों का रंगशिल्प सामाजिक यथार्थ से गहरे रूप में जुड़ा हुआ है, जिसमें व्यक्ति और समाज के मध्य संघर्ष, बदलते जीवन–मूल्य तथा मानवीय संवेदनाओं का सशक्त कलात्मक रूप प्रस्तुत होता है। यह शोध उनके नाट्य–साहित्य की रंगमंचीय विशेषताओं का सम्यक् मूल्यांकन करते हुए हिन्दी रंगमंच में उनके योगदान को रेखांकित करता है साथ ही, यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि डॉ. शंकर शेष का रंगशिल्प आधुनिक हिन्दी नाटक को नवीन अभिव्यक्ति, प्रभावी मंचीयता तथा सामाजिक प्रतिबद्धता प्रदान करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

मुख्य शब्द

नाट्य–साहित्य, रंगशिल्प, सामाजिक चेतना, संवाद–योजना, प्रतीकात्मकता.

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य की विभिन्न विधाओं में नाटक का विशेष महत्व है। नाटक वह साहित्यिक विधा है जिसमें जीवन को उसके वास्तविक रूप में मंच पर प्रस्तुत किया जाता है। कविता और कहानी की अपेक्षा नाटक का प्रभाव अधिक व्यापक होता है, क्योंकि उसमें शब्दों के साथ अभिनय, संगीत, प्रकाश, ध्वनि, वेशभूषा तथा मंच–सज्जा का समन्वित प्रयोग होता है। इसी कारण नाटक को दृश्य–काव्य कहा गया है।

भारतीय नाट्य परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। प्राचीन काल में संस्कृत नाटकों से लेकर आधुनिक हिन्दी नाटकों तक अनेक नाटककारों ने रंगमंच को नई दिशा प्रदान की है। आधुनिक हिन्दी नाटक के विकास में भारतेंदु हरिश्चंद्र, जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, भीष्म साहनी तथा डॉ. शंकर शेष जैसे नाटककारों का विशेष योगदान रहा है।

डॉ. शंकर शेष आधुनिक हिन्दी रंगमंच के उन महत्वपूर्ण नाटककारों में हैं जिन्होंने अपने नाटकों में समाज की वास्तविक समस्याओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। उनके नाटक केवल साहित्यिक पाठ नहीं हैं, बल्कि मंच पर जीवंत होने वाली रचनाएँ हैं। उनकी रंग–दृष्टि अत्यंत व्यावहारिक और आधुनिक है। उन्होंने नाटक को दर्शकों तक पहुँचाने के लिए रंगशिल्प के सभी तत्वों का संतुलित प्रयोग किया।

रंगशिल्प नाटक की आत्मा है। यदि कथानक नाटक का आधार है तो रंगशिल्प उसकी प्रस्तुति का माध्यम है। मंचीय प्रभाव, संवादों की गति, पात्रों की गतिविधियाँ, प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि प्रभाव, दृश्य परिवर्तन तथा अभिनय ये सभी रंगशिल्प के महत्वपूर्ण अंग हैं। डॉ. शंकर शेष ने इन सभी पक्षों को अत्यंत सूक्ष्मता और कलात्मकता के साथ अपने नाटकों में स्थान दिया है।

उनके नाटकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे दर्शकों को केवल मनोरंजन नहीं देते, बल्कि उन्हें सोचने के लिए विवश भी करते हैं। उनके नाटक समाज की विडम्बनाओं, भ्रष्टाचार, अन्याय, नैतिक पतन, पारिवारिक विघटन तथा व्यक्ति के आंतरिक संघर्ष को उजागर करते हैं। यही कारण है कि उनके नाटक आज भी समान रूप से प्रासंगिक हैं।

इस शोध–पत्र का उद्देश्य डॉ. शंकर शेष के रंगशिल्प का समग्र अध्ययन करना है। इसमें उनके नाटकों की मंचीयता, दृश्य–विधान, संवाद–योजना, पात्र–सृष्टि, भाषा–शैली, प्रतीकात्मकता तथा समकालीन प्रासंगिकता का विस्तृत विश्लेषण किया जाएगा।

रंगशिल्प की अवधारणा एवं स्वरूप

रंगशिल्पः अर्थ एवं परिभाषा

''रंगशिल्प'' दो शब्दों ''रंग'' और ''शिल्प'' से मिलकर बना है। ''रंग'' का संबंध रंगमंच, अभिनय और प्रस्तुति से है, जबकि ''शिल्प'' का अर्थ है रचना की कलात्मक संरचना अथवा निर्माण–कौशल। इस प्रकार रंगशिल्प से आशय उन समस्त कलात्मक एवं तकनीकी तत्त्वों से है, जिनके माध्यम से नाटक को मंच पर प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

रंगशिल्प नाटक की दृश्यात्मक अभिव्यक्ति का आधार है। यह केवल कथानक या संवाद तक सीमित नहीं रहता, बल्कि मंच–सज्जा, प्रकाश–व्यवस्था, ध्वनि–संयोजन, वेशभूषा, अभिनय, दृश्य–परिवर्तन, प्रतीकात्मकता तथा निर्देशक की प्रस्तुति–दृष्टि को भी समाहित करता है। एक सफल रंगशिल्प वही है जो दर्शकों को कथा से भावनात्मक और वैचारिक स्तर पर जोड़ सके।

भारतीय नाट्य परंपरा में रंगशिल्प का स्वरूप अत्यंत समृद्ध रहा है। नाट्यशास्त्र में भरतमुनि ने नाट्यकला के प्रत्येक पक्ष अभिनय, रस, भाव, वेशभूषा, संगीत और मंच–विन्यास का विस्तृत विवेचन किया है। आधुनिक रंगमंच ने इन सिद्धांतों को नई परिस्थितियों के अनुरूप विकसित किया है।

रंगशिल्प के प्रमुख तत्त्व

रंगशिल्प अनेक तत्त्वों के समन्वय से निर्मित होता है। प्रमुख तत्त्व निम्नलिखित हैं:

(क) **कथानक:** कथानक नाटक का मूल आधार है। यदि कथानक सशक्त नहीं होगा तो रंगशिल्प भी प्रभावी नहीं बन सकेगा। डॉ. शंकर शेष के नाटकों में कथानक सामाजिक जीवन की वास्तविक घटनाओं और समस्याओं से जुड़ा हुआ है। उनके कथानक में रोचकता, संघर्ष और नाटकीयता का संतुलित समावेश मिलता है।

(ख) **पात्र–योजना:** नाटक का प्रभाव उसके पात्रों पर निर्भर करता है। पात्र जितने अधिक स्वाभाविक और जीवन्त होंगे, रंगमंच पर उनकी प्रस्तुति उतनी ही प्रभावशाली होगी।

डॉ. शंकर शेष के पात्र किसी कल्पना लोक के नहीं हैं। वे हमारे आसपास के समाज से लिए गए पात्र हैं। शिक्षक, अधिकारी, कर्मचारी, राजनेता, गृहिणी, विद्यार्थी, मजदूर तथा सामान्य नागरिक उनके नाटकों में सहज रूप से उपस्थित होते हैं।

(ग)**संवाद:** संवाद नाटक की आत्मा माने जाते हैं। संवादों के माध्यम से ही पात्र अपने विचार, भावनाएँ और संघर्ष व्यक्त करते हैं।

डॉ. शंकर शेष के संवादों की प्रमुख विशेषताएँ हैं:

- सरल एवं सहज भाषा।
- पात्रानुकूल अभिव्यक्ति।
- संक्षिप्तता।
- व्यंग्यात्मक प्रभाव।
- भावात्मक गहराई।
- मंचीय संप्रेषण की क्षमता।

उनके संवाद दर्शकों के मन में सीधे उतरते हैं तथा सामाजिक चेतना उत्पन्न करते हैं।

(घ) **दृश्य–विधान:** दृश्य–विधान से आशय मंच पर घटनाओं के क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण से है। डॉ. शंकर शेष दृश्य परिवर्तन को अत्यधिक जटिल नहीं बनाते। उनके अधिकांश नाटक सीमित संसाधनों में भी सफलतापूर्वक मंचित किए जा सकते हैं। प्रत्येक दृश्य कथानक को आगे बढ़ाता है और दर्शकों की रुचि बनाए रखता है।

(ङ) **मंच–सज्जा:** मंच–सज्जा रंगशिल्प का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। डॉ. शंकर शेष अत्यधिक भव्य मंच–सज्जा के पक्षधर नहीं थे। उनका मानना था कि अभिनय और कथ्य की शक्ति मंच की सादगी को भी प्रभावशाली बना सकती है इसलिए उनके नाटकों में सीमित किन्तु अर्थपूर्ण मंच–सज्जा देखने को मिलती है।

(च) **प्रकाश–योजना:** प्रकाश केवल मंच को प्रकाशित करने का साधन नहीं है, बल्कि वातावरण निर्माण का भी महत्वपूर्ण माध्यम है।

प्रकाश के माध्यम से:

समय का संकेत मिलता है।

मनोवैज्ञानिक वातावरण निर्मित होता है।

पात्रों की भाव–भंगिमाएँ उभरती हैं।

नाटकीय तनाव उत्पन्न होता है।

डॉ. शंकर शेष ने प्रकाश का उपयोग अत्यंत संयम और कलात्मकता के साथ किया है।

(छ) **ध्वनि एवं संगीत:** ध्वनि और संगीत नाटक की भावात्मक प्रभावशीलता को बढ़ाते हैं। उनके नाटकों में संगीत का प्रयोग सीमित किन्तु उद्देश्यपूर्ण है। आवश्यकतानुसार प्राकृतिक ध्वनियाँ, मौन तथा पार्श्व–संगीत का प्रयोग करके वातावरण को सजीव बनाया जाता है।

(ज) **अभिनय:** अभिनय रंगशिल्प का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है। डॉ. शंकर शेष के पात्र अभिनेता को अपनी प्रतिभा प्रदर्शित करने का पर्याप्त अवसर देते हैं। उनके पात्रों के मनोवैज्ञानिक संघर्ष अभिनय को अधिक प्रभावशाली बनाते हैं।

(झ) **प्रतीक एवं बिम्ब:** आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रतीकात्मकता का विशेष महत्व है। डॉ. शंकर शेष ने सामाजिक विडम्बनाओं, नैतिक संकटों और मानवीय संघर्षों को व्यक्त करने के लिए प्रतीकों का अत्यंत प्रभावशाली प्रयोग किया है। उनके प्रतीक कृत्रिम न होकर कथानक से स्वाभाविक रूप से जुड़े रहते हैं।

आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगशिल्प

आधुनिक हिन्दी नाटक में रंगशिल्प का स्वरूप निरंतर विकसित हुआ है। प्रारम्भ में जहाँ ऐतिहासिक और पौराणिक कथानकों पर बल था, वहीं बाद में सामाजिक यथार्थ, मनोवैज्ञानिक संघर्ष तथा प्रयोगधर्मिता को महत्व मिला।

इसी परिवेश में डॉ. शंकर शेष का रंगशिल्प विकसित हुआ। उन्होंने आधुनिक जीवन की जटिलताओं को रंगमंच पर प्रस्तुत करने के लिए सरल, प्रभावशाली और व्यावहारिक शैली अपनाई। उनके नाटक न तो अत्यधिक दार्शनिक हैं और न ही केवल मनोरंजन तक सीमित हैं। वे दर्शकों को सोचने, प्रश्न करने और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में प्रेरित करते हैं।

डॉ. शंकर शेष के रंगशिल्प की विशिष्टता

डॉ. शंकर शेष के रंगशिल्प की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

- मंचीय सरलता।
- सामाजिक यथार्थ का प्रभावी चित्रण।
- सशक्त संवाद।
- जीवंत पात्र–योजना।
- प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति।
- दृश्य–परिवर्तन की सहजता।
- प्रकाश एवं ध्वनि का नियंत्रित प्रयोग।
- सीमित संसाधनों में सफल मंचन की क्षमता।
- दर्शकों से सीधा संवाद स्थापित करने की शक्ति।
- विचारोत्तेजक एवं प्रभावपूर्ण अंत।

निष्कर्ष

रंगशिल्प नाटक की सफलता का प्रमुख आधार है। डॉ. शंकर शेष ने अपने रंगशिल्प के माध्यम से यह सिद्ध किया कि नाटक केवल साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि एक जीवंत सामाजिक कला है। उन्होंने मंच की व्यावहारिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए ऐसे नाटक लिखे जो आज भी रंगमंच पर समान रूप से लोकप्रिय हैं। उनका रंगशिल्प आधुनिक हिन्दी नाट्य परंपरा की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि माना जाता है।

संदर्भ सूची

1. शेष, शंकर (1976) *समग्र नाटक.* पराग प्रकाशन, दिल्ली।
2. नगेन्द्र (1988) *हिन्दी साहित्य का इतिहास.* मयूर पेपरबैक्स, नोएडा (उ.प्र.)।
3. सिंह, बच्चन (1993) *आधुनिक हिन्दी नाटक.* लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।
4. चातक, गोविन्द (1982) *भारतीय रंगमंच.* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. लाल, लक्ष्मीनारायण (1985) *हिन्दी नाटक और रंगमंच.* साहित्य भवन प्रा. लि., प्रयागराज।
6. रस्तोगी, गिरीश (1998) *हिन्दी नाटक: सिद्धांत और विकास.* लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।
7. वर्मा, रामकुमार (1964) *हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास.* भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।

****